Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852; Impact Factor: RJIF 5.44
Received: 25-06-2020; Accepted: 10-06-2020; Published: 26-07-2020
Volume 1; Issue 2; 2020; Page No. 15-18

वन आधारित कुटीर उद्योगः औषधि उद्योग के विशेष संदर्भ में

Prem Prakash
(HOD Department of Political Science) Radha Govind University Ramgarh, Jharkhand, India

सारांश
संसार की प्राचीनतम पुस्तक अथर्ववेद में वनों को समस्त सुखों का स्रोत माना गया है। आयुर्वेद में लिखा है कि जिस घर में ''तुलसी का पौधा बार–बार मुरझा जाये अथवा न लगे वहां का पर्यावरण प्रदूषित होता है। ''साथ ही प्रत्येक वनस्पति को औषधी की तरह मुल्यवान एवं महत्वपूर्ण माना गया है। प्रत्येक वनस्पति को औषधी कहा गया है।

मूल शब्दः प्राचीनतम, अथर्ववेद, स्रोत, संसार

प्रस्तावना
पेड़ –पौधों से औषधियों प्राप्त करने का इतिहास बहुत पुराना है। ऋग्वेदन में भी ऐसी औषधियों का वर्णन मिलता है। आज से 4,000 वर्ष पूर्व लिखे गए ग्रन्थ सुश्रुत संहिता और चरक संहिता में भी पौधों के चिकित्सीय गुणों का वर्णन विस्तार से किया गया है। औषधि के रूप में जड़ी–बूटियों का प्रयोग प्राचीनकाल से होता आ रहा है। इसके चमत्कारी प्रभाव का वर्णन प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है। जड़ी–बूटियों के सेवन से काया–कल्प' तक के प्रमाण मिलते हैं रामायण काल में लक्ष्मण को शक्ति बाण लगने पर मृत्यु के मुख से निकालने के लिए 'सजीवनी बूटी' का प्रयोग हुआ था। गणेष के सिर कटे धड़ में हाथी का मस्तक जोड़ देना प्राचीन शल्य चिकित्सा का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करता है। जड़ी – बूटियों से रोग उपचार की पद्धति आयुर्वेदिक चिकित्सा की पद्धति मानी जाती है। चिकित्सक वैद्य कहे जाते हैं प्राचीन काल में राजा – महाराजा के निजी वैद्य होते थे, जो बड़े निपुण होते थे। धन्वंतरि का नाम वैद्यों में सर्वश्रेष्ठ और सर्वोपरि माना जाता है। अजातषत्रु के वैद्य निपुण होते थे। धन्वंतरि का नाम वैद्य जीवक जड़ी बूटियों के ज्ञाता थे। अंग्रेजों के आगमन के पहले सम्पूर्ण रोगों का उपचार वैद्यों के द्वारा आयुर्वेदिक पद्धति से ही होता रहा और ब्रिटिष शासन काल में भी पहले के कुछ वर्षो तक आंषिक रूप से ही सही आयुर्वेद चिकित्सा चलती रही। उन दिनों मगध क्षेत्र में वैद्य गाँवों में घूम–घूमकर गरीब – अमीर सभी तरह के रोगियों का उपचार करते रहे। ये वैद्य अपनी दवाएँ जड़ी–बूटियों से तैयार करते थे। उन्हें रोगियों से उनके श्रद्धा– सामर्थ्य के अनुसार जो भी मिल जाता, स्वीकार कर लेते। रोगों को जाँचने –परखने के लिए कोई मनमानी फीस लेने–देने की परम्परा नहीं थी, न कोई खर्चीली पैथोलोजिकल जाँच की व्यवस्था थी। वैद्य इतने निपूण होते थे कि नाड़ी परीक्षण, आँख, जीभ आदि देखकर रोग का निदान कर लेते थे। समय बदला और वैद्यों का प्रभाव क्षीण होने लगा और वनौषधियों का प्रयोग घटने लगा। विदेषी शासन भाषा, विदेषी वेष–भूषा, विदेषी रहन–सहन एवं विदेषी चिकित्सा के प्रति लोगों की ललक बढ़ी। एलोपैथी का प्रचार–प्रसार बढ़ता गया और बढ़ते प्रभाव के कारण स्वदेषी जड़ी–बूटियों द्वारा इलाज को विस्मरण कर दिया गया, किन्तु झारखंड में जहाँ जनजातियों की बहुलता रही जो सम्पन्न नहीं रहे, जो आधुनिक नहीं हो पाये उनकी आस्था और विष्वास जड़ी–बूटियों में बना रहा। उनके पास चिकित्सा का अन्य विकल्प भी मयस्सर नहीं हैं। अतः ये जड़ी–बूटियों के द्वारा उपचार करते–कराते रहे। यह उनकी आर्थिक विपन्नता का ही मात्र संकेतक नहीं हैं। यह उनकी संस्कृति का एक अंग है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय अधिकांष औषधियों व दवाईयों का आयात किया जाता था। 1948 में केवल 12 करोड़ रूपये की दवाईयों का उत्पादन होता था जो 1960–61 में 60 करोड़ रूपये व 1991–92 में और बढ़कर 4,900 करोड़ रूपये के मूल्य की दवाईयों का हो गया है। योजना काल में कई कारखाने सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित किये गये है। जिनमें दी इंडियन ड्रग्स एण्ड फार्मा– स्युटिकल्स लिमिटेड एवं हिन्दुसान एण्टीबायटिक्स लिमिटेड प्रमुख है। भारत अब दवाईयों का निर्यात भी करने लगा है। भारत में दवाओं का प्रति खपत 4 रूपये है जो विष्व में सबसे कम है।

'विभागाध्यक्ष राजनीति विज्ञान विभाग, राधा गोविंद विष्वविद्यालय, रामगढ़।

इस तरह जंगल जंलगवासियों की चिकित्सा तथा दवा संबंधी आवष्यकताओं की पूर्ति करते रहा है। इसका कारण यह है कि अस्वास्थ्यता होने की स्थिति मे मानव प्राकृति की शरण में गया होगा तथा प्राकृतिक वस्तुओं के स्वाद तथा गुण के आधार पर अपने स्वास्थ्य को ठीक करने का प्रयास किया होगा। शरीर के कोई भाग का अस्वस्थ्य हो जाने की स्थिति में उस पर फूल–पतियों का रस मलकर चढ़ाया होगा तथा पट्टियों के सहारे पट्टी बांधी होगी। उसी प्रकार विषेष मौसम में विषेष बीमारी तथा उसके उपचार के उपाय ढूँढे गए होंगे। आयु तथा यौन समूह के अनुसार बीमारी की दवा खोजी गई होगी। अभी भी वन ग्रामों तथा जंगल के पास– पड़ोस में रहने वाले लोग जंगली पौधों तथा जंगली उपजों क चिकित्सा मूल्य से अवगत रहते हैं। आम बीमारी तथा उसमें प्रयोग होने वाली दवा के रूप में वन उपजों, पेड़–पौधों, फूल–पतियों, बीजों, फलों, छालों, जड़ों के औषधीय गुण से उन्हें आरंभ से ही अवगत कराया जाता है। कुछ विषेष प्रकार के रोगों को दूर करने के लिए जनजातिया गांवों में चिकित्सा मानव (मेडिसीन मैन) रहते हैं। वे रोग तथा जंगली दवा की जानकारी रखते हैं। चिकित्सा मानव रोगों के उपचार के लिए जंगली जानवरों के खाल, सींग, नख बाल, हड्डी आदि के सहारे बीमारी को झाड़ते हैं तथा जंगली उपजों से तैयार करके दवा का निर्माण करते है। जड़ी–बूटियों के द्वारा उपचार की अनेक विषेषताएं हैं, खासकर जनजातिय जीवन में इसका बहुत महत्व

हैं सुदूर अतीत में इस पद्धति का महत्स मिश्र, चीन, भारत आदि में बहुत अधिक रहा और प्राचीन साहित्य में इसके चमत्कारी गुणों की चर्चा है। बौद्धकाल में औषधीय, पौधों का उल्लेख मिलता है। भारत के औषधीय ग्रन्थों में उल्लेखित दो हजा मद या वस्तुओं में केवल दो सौ खनिज या पशु स्रोत से प्राप्त होत हैं, शेष सभी वनस्पतियों से ही उपलब्ध होते हैं।

वर्ष 1881 में थॉमसन हेनरी हक्सली ने कहा था कि अपने पूर्वजों का उपहास करना आसान है। किन्तु यह खोजना और भी अधिक लाभकारी है कि हमारे पूर्वज जो हमसे कम समझदार नहीं थे, उन्होंने उन विचारों को क्यों अपनाया जो हमें आज बेतुके और निरर्थक लगते हैं। पारंपरिक लोक ज्ञान के बावत यह उचित सटीक लगती है। देषज चिकित्सा पद्धति में निहित पुरखों के ज्ञान की खोज आज के लिए दुरूह कार्य है। इस कठिन लेकिन लोक–कल्याणकारी कार्य के लिए एथनिक समाज सदा से प्रयत्नषील रहा है। औरतों की भागीदारी के बिना यह महती कार्य पूर्ण नहीं हो सकता है। आमतौर पर स्त्रियों के कार्य–कलाप के बारे में यही अवधारणा सही है कि आदिवासी औरतें स्वास्थ्य के कार्य भी करती है। औरतों का स्वास्थ्य संबंधी देषज ज्ञान से पूरा समाज लाभान्वित होता आया है। जंगल से रिष्ता काफी समृद्ध है। पेड़ो–पतों, जड़ों, छालों, फूलों, डंठलों, बीजों से दवा बनाने और इलाज करने के उनके परंपरागत ज्ञान को आज समाज सुरक्षित व संवर्द्धन करने में जुटा है। आदिवासी जीवन की प्रकृति झलकता ने आदिवासी समाज को बीमार होने पर प्रकृति प्रदत्तर जड़ी–बूटियों का मोहताज भी बनाया है। परंपरागत व्यवस्था ने अब तक इस समजा को बचाए रखा है। अन्यथा जंगल जीवन और खेतों में काम करते हुए आदिवासी के लिए जीवन की रक्षा करना संभव नहीं हो पाता।

होड़ोपैथी झारखण्ड के मुण्डा समुदाय की परंपरागत चिकित्सा पद्धति है। होड़ों का अर्थ मनुष्य और पैथी का अर्थ एहसास है। इस तरह होड़ोपैथी मानवीय एहसास का सामानार्थी है। मुण्डा समाज में हजारों वर्षो से अनेक व्याद्वियों का इलाज जंगल में मिलने वाली जड़ी–बूटियों से होता आया है। इस कारण इस चिकित्सा पद्धति को होड़ोपैथी के नामस से जाना गया है।

इस चिकित्सा पद्धति के माध्यम से आज भी सुदूर देहातों में गाँव–गाँव में लोग इलाज कर रहे हैं। आदिवासी इलाकों में सबसे गंभीर बीमारियों में मलेरिया और डायरिया त्रासदी बनकर आता है। सरकार की चिकित्सा पद्धति गाँवों तक पहुँचने से पहले ही आदमी काल–कलवति हो जाता है। अब भी गाँवों में मलेरिया का इलाज लोग देषी तौर–तरीकों से करते हैं होड़ोपैषी के तहत औरतें प्रजनन और बच्चों के स्वास्थ्य की देखरेख करती है। आदिवासी औरतें जो कि बच्चे के जन्म की परंपरागत धायों का महत्वपूर्ण योगदान होता हैं विष्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के मुताबिक अब भी 90 प्रतिषत बच्चों को जन्म घरों में होता हैं। गाँवों में औरतें बच्चे के जन्म के लिए घर को ही प्राथमिकता देती है। संथाल परगना और कोल्हान के इलाके में महिला वैद्य जड़ी–बूटियों से दवा बनाने और बेचने का काम महिलाएँ करती हैं। एथनोबोटानिष्ट डॉ0 पी0पी0 हेम्ब्राम का कहना है कि झारखण्ड के गाँवों में तो हर माँ घर की वैद्य है। उन्होंने स्वास्थ्य अपने हाथ और हर माँ को घर की वैद्य का नारा देकर स्वास्थ्य को सता सुलभ और जीवनदायी बनाने की बात कही है। डॉ0 हेम्ब्रोम का मानना है, कि औरतों के हाथों में स्वास्थ्य का ज्ञान सुरक्षित रहता है और परिवार चलाते हुए वह हर बीमारी खासकर औरतों की बीमारियों का इलाज करती है। वह देषज चिकित्सा का ज्ञान का प्रसार व हस्तांतरण करती है। माहवारी संबंधी तकलीफ, पेट दर्द, कमर दर्द और माहवारी देर से आने, श्वेत प्रदत, अधिस्राव के इलाज महिलाएँ गाँव में ही करती है। हर परिवार में माँ को पता है, कि कौन–सा साग और सब्जी बनाने पर बच्चों औ उनका (माँ) स्वास्थ्य ठीक रहेगा। जैसे पेट खराब होने पर फूटकल का साग वह बनाती है। आदिवासी औषधी यानि कि होड़ोपैथी के तहत गर्भपात के बाद रक्तस्राव, तपेदिक, गलाघोंटू, कुकुर–खाँसी, पोलियों, चेचेक, कुण्ठ, जख्म, कमर दर्द, स्त्रियों का छाती दर्द, मोच का दर्द, अस्थि अंग, आम सर्दी, मलेरिया, फेफड़े की बीमारियों, गठिया रोग, सरदर्द अधकपारी, संद्विबात, लकवा, ह्रदय रोग, मधुमेह, कानदर्द, फाइलेरियासिस, कान बहना, नाक बहना, बहरापन, नाक से रक्त बहना, गला दर्द, दाँत दर्द, गर्भ निरोधक, विच्छुदंष, सर्पदंष आदि का इलाज होड़ोपैथी की चिकित्सा पद्धति के तहत किया जाता है। इनत माम बीमारियों के इलाज के लिए जड़ीबूटी से दवाएँ बनाने का काम औरतें करती हैं। संथाल परगना की औरतें आयुर्वेद फार्मूले से पाचक त्रिकुट, नीम का तेल, सिंदुवार पता का तेल, सिंदुवार के तेल का मलहम, काढ़ा बाकस पता को टी0 वी0 व खाँसी के लिए पैर चिकन महलम बनाने का काम औरतें करती हैं। इसके लिए औरतें जंगल से जड़ी–बूटी तक इलाज कर अपनी आजीविका चलाती है। इन महिलाओं का कहना है, कि गाँव में गर्भवती माताओं की देख–भाल से लेकर बच्चों के जन्म तक का कार्य वे करती है। ग्रामीण धायों को जिस तरह की सरकारी मान्यता मिलनी चाहिए वह अब तक नहीं दी गई है। झारखण्ड वन प्रदेष रहा है और यहाँ आयुर्वेदिक दवाओं की कमी नहीं है।

विष्व स्वास्थ्य विज्ञान में आदिवासियों की जड़ी–बूटी चिकित्सा को लोक औषधी के नाम से मान्यता मिली है। होड़ोपैथी का पहला प्रषिक्षण संस्थान सन् 1988 में संथाल परगना के पाकुड़ जिले के सटिया गाँव में पहाड़ियो सेवा समिति ने शुरू किया। यह केन्द्र नियमित रूप से झारखण्ड, बंगाल, उड़ीसा और मध्यप्रदेष के इच्छुक आदिवासियों को प्रषिक्षित करने में जुटा है। उसकी प्रभावी सफलता से प्रेरित होकर सन् 1993 ई0 में कैथोलिक हॉस्पीटल, एसोसिएषन ऑफ इंडिया ने इस वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति को मंजूरी दी। अब इस प्रणाली की ओर चिकित्सा जगत का ध्यान गया है, परन्तु इस चिकित्सा विधि का व्यापारीकरण नहीं हुआ है और उससे जुड़े ग्रामीण वैद्य सेवाभाव से पीड़ित लोगों की मदद करते हैं घरेलू जैसे सेवाभाव और उपचार शैली के विकास में झारखण्ड महिलाओं का योगदान महत्व पूर्ण माना जाता है। फादर जे0 वेसर्स एसजे ने अपनी पुस्तक 'बॉटनी ऑफ राँची डिस्ट्रिक्ट' की प्रस्तावना में लिखा है, कि आजीविका के क्रम में जंगल जानेवाली महिलाओं ने पेड़–पौधों और साग–पातों का नामकरण किया है। यह पठारी राज्य अपने धरती पर अनेक दुर्लभ जड़ी–बूटियों सजोये है। उनसे कई दुर्लभ औषधियाँ बनती है। जिसमें असाध्य रोगों के निवारण की क्षमता होती है। सदियों से यहाँ के मूलवासी इन्हीं दवाओं के भरोसे शरीर को नीरोग रखने के उपाय करते आये हैं, पर इन जड़ी–बूटियो को पहचानने और उनके गुणों के जानकार लोग कम रह गये हैं। गाँवों में एक पेषेवर के रूप में वैद्यों की अलग पहचान नहीं है। संभवतः सेवा या मदद की भावना इसे बनाए हैं। इस विषेष क्षेत्र में षिष्य, परंपरा या गुरूकुल षिक्षा की प्रथा नहीं बनी। इस कारण आज जितनी भी जानकारी बनी रह गयी है, वह अनौपचारिक ढंग से पारिवारिक संपदा की तरह पीढ़ी–दर पीढ़ी यहाँ तक पहुँची है।

आधुनिक दवाओं के अस्तित्व में आ जाने से परंपरागत देहाती दवाओं का प्रयोग प्रभावित हुआ है। लेकिन वन ग्रामों तथा जंगल में उपलब्ध होनवाली देहाती दवाओं का प्रयोग बहुत अधिक मात्रा में हो रहा है।

चिन्ता की बात यह है, कि झारखण्ड सरकार अब भी सफेद मुसली जैसी लाभकारी पौधों की खेती का प्रोत्साहन देने की बात करती है, लेकिन दुर्लभ होती जा रही जड़ी–बूटियों की पौधाषाला विकसित कर उनके संरक्षण के उपाय नहीं कर रही। इन अंचलों में औषधीय पौधों के बारे में विरासती ज्ञान के संचय और समृद्धि के लिए समाज या राज्य की और से समुचित व्यवस्था विकसित नहीं हो पायी है। जैव विविधता की यह पुरखों की धरोहर इस उपेक्षा से छीज रही है। कई जटिल और असाध्य रोगों के निवारण की क्षमता से युक्त औषधीय पौधे के भण्डार का तस्करों द्वारा अनाधिकृत दोहन झारखण्ड में शुरू हो गया है। औषधीय पौधों और वृक्षों की विधिवत् विस्तृत जानकारी की दस्तावेजी

संग्रह और उनकी सुरक्षा अब आवष्यक हो गयी है। झारखण्ड के जंगलों में सुरक्षित वनस्पतियों की कई प्रजातियाँ खतरे में बतायी जाती है। जैसे सर्पगंधा, कुसुम, हर्रे, आँवला, बहेड़ा, छुइमुई इत्यादि। दुलर्भ पेड़–पौधों के फल, जड़ और छाल की जंगल से चोरी हो रही है। अगर समय रहते उनके अपहरण पर रोक नहीं लगती तो ये वनस्पतियों अदृष्य हो जा सकती है। जैसे पलामू के जंगलों में जोना छाल नाम का वृक्ष पाया जाता है। इसकी चोरी करनेवाली लोग गलत तरीके से पेड़ की छाल को उतार लेते हैं, कि कुछ दिनों बाद वह सूखने लगता है।

बिरहोर जंगली जड़ी–बूटियों के बारे में अद्भूत ज्ञान रखते हैं जटिल से जटिल रोगों का इलाज वे वनौषधियों के संबंध में दस्तावेज तैयार कर सकती है। मगर अफसोस ऐसा नहीं हो रहा है।

खरिया जनजाति के अनेक व्यक्ति अपने परिवेष में उत्पन्न विभिन्न जड़ी–बूटियों से अभी तक अपने परिजनों और ग्रामजनों की ही चिकित्सा करते रहे हैं। 62 साक्षात्कार– दाताओं के द्वारा प्रतिवेदन किया गया कि जड़ी–बूटियों से की जानेवाली चिकित्सा की उनकी प्रतिभा की जानकारी ग्राम में पदस्थ गैर आदिवासी फॉरेस्ट गार्ड, डिप्टी रेंजर, षिक्षक, पटवारी इत्यादि को है। उन्होंने अपने उच्च अधिकारियों परिजनों आदि की चिकित्सा के लिए उनका उपयोग किया। सफलता मिलने पर इनका प्रचार हुआ और अब अनेक बाहरी लोग उनके पास चिकित्सा के लिए आते हैं, तथा बदले में उन्हें मेहनताना देकर जाते हैं ये खरिया चिकित्सक नहीं जानते हैं, कि जो मेहनताना दिया जा रहा है वह उचित है या नहीं। परन्तु वे इसे स्वीकार कर प्रसन्न होते हैं। इस दिषा में त्वरित रूप से कुछ कदम उठाया जाना आवष्यक है। उकने विकास और इनके रोपण के रकवे को बढ़ाने की आवष्यकता है।

तीसरी आवष्यकता है, इन औषधीय बनोपजों के संग्रह और उन्हें सुरक्षित रखने की। चौथी आवष्यकता है इन औषधीय पौधों और जड़ी–बूटियों की वनों से अवैध निकासी और तस्करी रोकने की। छठी आवष्कता है, इनके क्रय–विक्रय की व्यवस्था से बिचौलियों को जो कि खरिया आदिवासियों का भीषण शोषण कर रहे हैं, समाप्त देने की। प्रदेष में जड़ी–बूटियों बिचौलियों के द्वारा बहुत ही सस्ते में क्रय कर बाजार में बहुत ऊँचे मूल्य पर बेचे जाते हैं। आदिवासी इनके वास्तविक मूल्य से अपरिचित रहते हैं शासन का वन विभाग इस तथ्य से परिचित है, परन्तु वह अब मात्र योजनाएँ बनाने के अलावे इस दिषा में कोई कारगर पहल नहीं कर पाया है। इस संदर्भ में यह तथ्य अत्यन्त दुखद है कि शासन के द्वारा इन लघु वनोपजों का क्रय तो कर लिया जाता है, पर इनके संरक्षण परिषोधन यथा समय बिक्रय की व्यवस्था न होने के कारण वे सड़ जाती है। इस मामले में क्षेत्रीय अधिकारियों और कर्मचारियों के द्वारा इनका दुरूपयोग किया जाना त्रासद है। कोरबा जिला, जिसमें सर्वेक्षित ग्राम सम्मिलित है, के वनांचल सामान्य औषधीय पौधों और जड़ी–बूटियों से ही नहीं, बल्कि अनेक दुर्लभ जड़ी–बूटियों की जानकारी खरिया आदिवासियों में से अनेक को है। वे अत्यन्त परिश्रमपूर्वक इनकों संकलित करते हैं। बिचौलिये इस बहुमूल्य संकलन को बहुत कम कीमत पर खरीद लेते है। मिट्टी के मोल खरीदी गई इन जड़ी–बूटियों को ये बिचौलिये चिकित्सकों और आयुर्वेदिक दवाओं के निर्माताओं को बहुत महँगे मूल्य पर बचे देते हैं साक्षात्कारदाताओं के द्वारा जानकारी दी गई की एकत्रित की जानेवाली वनोपज में सफेद मूसली धूपख चूहराघास, विरंगी बीज, वनफूल, सेंथाकर, मैदाघास, घाटाफल, महुआ, चारवैल, फुल्लुलासा, मषरूम, मोहलाई–पता, बॉस, बीज, साल बीज, औषधीय पौधे जिनकी अनेक प्रजातियाँ हैं, मिलते हैं। इनकी जानकारी आदिवायिों के अलावे गुनिया लोगों की होती है। वे इन औषधियों का उपयोग समुदाय के सदस्यों की चिकित्सा के लिए सफलतापूर्वक करते हैं।

एलोपैथी चिकित्सा दुलर्भ और मँहगी है। जनजातियों के लिए यह पद्धति और भी माकुल हैं। झारखण्ड के जंगलों में 90 प्रतिषत प्राणदायी औषधीय वनस्पतियाँ पाई जाती है। जड़ी–बूटियों की खेती का रूझान काफी पुराना है।

इस क्षेत्र में कई शोध कार्य भी हो चुके है तथा कई जारी है, परन्तु अभी भी हम प्रारंभिक अवस्था में ही है। क्योंकि पूर्णरूप से इस कृषि का प्रमाणीकरण या मापदण्डीकरण नहीं हो पाया है। एक किसान ने बताया कि उसने अपने 15 डिसमिल जमीन पर सतावर की खेती की। खाद और पानी देकर अच्छी फयन प्राप्त की, लेकिन वह बाजार में कोड़ी के भाव में भी नहीं बेच सकां अतः ऐसे में यदि हमज जड़ी–बूटियों का दृष्टिकोण अथवा व्यवसायिक खेती करने जा रहे हैं तो विपणन की व्यवस्था पहले ही कर लेना चाहिए। ऐसा करने पर संभावनाएँ अधिक होगी एवं आर्थिक लाभ के साथ–साथ नाम कमाने का भी सर्वाधिक उपयुक्त साधन सिद्ध होगा। यह सत्य है, कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिक के अध्ययन से आधुनिक एलोपैथिक दवाओं का प्रचार–प्रसार में आष्चर्यजनक प्रगति हुई है, परन्तु इनके माध्यम से चिकित्सा में आनेवाला खर्च हर व्यक्ति आसानी से वहन नहीं कर सकता है। यही कारण है, कि संसार में 80 प्रतिषत आबादी आज भी देषी चिकित्सा पर ही निर्भर है। यही नहीं विकसित देषों में भी हर्बल ड्रग्स के प्रति अधिक विष्वसनीयता एवं आकर्षण पैदा हुआ है। ऐसा विष्वास किया जाता है, कि जड़ी–बूटियों से बनी औषधियाँ कम हानिकारक एवं इनके प्रचार के बाद कोई कुप्रभाव नहीं पड़ता है।

यह सौभाग्य की बात है, कि औषधीय महत्व की पाई जानेवाली अधिकांष जड़ी–बूटियाँ भारत में पाई जाती है। इस संदर्भ में झारखण्ड ज्यादा सौभाग्याषाली है, क्योंकि इनमें से ज्यादा प्रजातियाँ इन राज्यों में प्राकृतिक रूप से पाई जाती है, परन्तु दुर्भाग्य की बात है, कि एक तरफ जहां इसमें से अधिकांश पौधों की व्यवसायिक महता तथा उनके औषधीय गुणों की पहचान नहीं है, वहीं इन जड़ी–बूटियों के अंधाधुंध विदोहन के कारण इसमें से अनेक जड़ी–बूटियाँ विलुप्त होने के कगार पर है। आज इसी को देखकर व्यवसायिक महत्व के कई औषधीय पौधों की जनमानस को पहचान करवाने उसके औषधीय महत्व को बताने एवं इनकी कृषि तकनीक की जानकारी प्रदान करने का प्रयास प्रथम चरण में कृषि ग्राम विकास केन्द्र रूक्का ने पिछले कुछ वर्षो से आरंभ किया है।

झारखण्ड के पास प्राकृतिक और सामुचित कृषि दोनों से हर्बल और ऐरोमैटिक उत्पादन में व्यापक संभावना है। भारत के राष्टपति डॉ0 कलाम ने झारखण्ड की हर्बल संभाव्यता को रेखांकित किया है और इसकी परिकल्पना देष के हर्बल राज्य के रूप में की है। झारखण्ड के लिए वन तथा कृषि दोनों में हर्बल और एरोमैटिक उत्पादन से दूरस्थ क्षेत्रों तक के लिए भी बड़े पैमाने पर रोजगार की कुंजी है। इससे गरीबों विषेषकर ग्रामीण लोगों और महिलाओं की जीवन स्थितियों को सुधारने का लाभ भी प्राप्त होगा। झारखण्ड के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय हर्बल बाजार से जुड़ने से राज्य को बड़ा राजस्व प्राप्त होगा, जो लोगों तक पहुँचेगा एवं इस तरह उनकी जीवन स्थिति सुधरेगी और हजारों नए रोजगर उत्पन्न होंगे। चूँकि इस सारी प्रक्रिया में अंतर्राष्ट्रीय बाजार में स्वीकृति विनिर्दिष्ट गुणवता वाली जड़ी–बूटियों की प्राप्ति और खेती में कतिपय मानकों को बनाए रखने की आवष्यकता है। इसलिए हर्बल उत्पादन को प्रोत्साहित करने में सरकारी हस्ताक्षेप की तुरन्त आवष्यकता है। राज्य में समुचित अवसंरचना, सहायक प्रणाली, कुषल कारीगरों द्वार प्रबंधन और विषेषज्ञता की निगरानी की वातावरण सरकार द्वारा लोगों को उपलब्ध होना चाहिए। सरकार को इस क्षेत्र में बदलाव के कारकों के रूप में वैकल्पिक मार्ग तथा उद्यमियों को भी सुविधा प्रदान करना चाहिए। वितीय प्रोत्साहन, उत्पाद को बाजार से जोड़ने और उत्पादन के समग्र बीमे से झारखण्ड में हर्बल तथा एरोमैटिक उत्पादन को प्रोत्साहन मिलेगा। जिससे राज्य को नया जोष मिलेगा। क्षमता संभावना के साथ झारखण्ड सोने की खान पर बैठा है और यह लोगों की सहायता कर राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय बाजार में पैठ जमा सकता है।

अज्ञानता अनदेखी और निरक्षरता लोगों को अपने बल पर इस अवसर को प्राप्त करने नहीं दे पा रही है। केवल सरकार की प्रतिबद्धता, निगरानी और संसाधन संचालन से लोगों के लिए संभावना पर पकड़ बन सकेगी। हरा सोना जैसी कि औषधीय जड़ी–बूटियों को कहा जाता है। झारखण्ड के विकास की एक कुँजी लिए हुए है। चूँकि विष्व बाजार में माँग व आपूर्ति के बीच बहुत बड़ा अंतर मौजूद है एवं जैसा कि हमारे दूर दृष्टिवान राष्ट्रपति डॉ0 ए0पी0 जे0 अब्दुल कलाम ने सही ही इंगित किया है। हर्बल तथा हर्बल उत्पाद झारखण्ड के विकास के मुख्य क्षेत्रों में से एक है, जो राज्य के सर्वांगीण विकास का एक कारक बन सकता है।

डॉ0 वी0पी0 हेम्ब्रोम कहते है, कि भारत सरकार ने इंडिया सिस्टम ऑफ मेडिसीन 2001 का प्रारूप जो राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का हिस्सा है, उसके तहत् देषी चिकित्सा पद्धति को बढ़ावा दिया गया तो गाँव की औरतों को स्वास्थ्य की गहरी जानकारी होंगी। इसमें पूरे समुदाय को लाभ होगा। इंडियन सिस्टम ऑफ मेडिसीन में आयुर्वेद यूनानी, सिद्धा, योगा, नेचुरोपैथी और होमियोपैथी को गिना जाता है, इसके तहत् ही होड़ोपैथी को मान्यता दी जानी चाहिए। इससे आदिवासी स्वास्थ्य परंपरा को सुरक्षित रखा जा सकता है। ''द बॉटनी ऑफ राँची डिस्ट्रिक 1961 में फादर ब्रेसर्स ''एस0 जे0 ने लिखा है कि संकट के समय औरतों ने समय में रक्षा की है। वे जंगलों में जाकर बीज, फल, पतों, खाद्य पादपों को चुनकर लाई और उनसे जीवन बचाने का काम कियां औरतों ने जीवन रक्षक पादपों को चुनकर लाई और उनसे जीवन बचाने का काम किया। औरतों ने जीवन रक्षक पादपों का नामकरण किया। उनके इस दक्षता और ज्ञान को सुरक्षिता एवं संरक्षित रखने का काम नहीं किया गया। हजारों सालों के एथनो – मेडिकल कल्चर को आदिवासियों ने संर्वद्धित और संरक्षित किया है। मुण्डा आदिवासियों ने अपने पारंपरिक स्वास्थ्य ज्ञान को ईजाद किया। डॉ0 हेम्बाम का कहना है कि भारत में लगभग 53 मिलियन आदिवासी है। भाषा आधार पर 277 एथनिक समूह है। लगभग 750 पादप ऐसे हैं, जिसे मुण्डा हजारों सालों से औषधि के तौर पर इस्तेमाल करते आ रहे हैं। इसमें से 750 औषधीय पौधों के बारे में वैज्ञानिक शोध कर रहे हैं। वैसे आदिवासी लगभग 2000 पौधों के बारे में ज्ञान रखते हैं। फादर हॉफमैन ने 375 औषधीय पौधों के चिकित्सीय, इस्तेमाल के बारे में लिखा है। डॉ0 हेम्ब्रोम मानते हैं कि औरतों के ज्ञान संचय की प्रवृति के फलस्वरूप ही औषधीय पौधों का महत्व बना रहा है। महिला स्वास्थ्य के विभिन्न पहलुओं पर औरतों की जानकारी काम आती है। स्वस्थ्य की जानकारी रखने वाली और गाँवों में अपनी सेवा देनेवाली ग्रामीण धाय वा वैद्य का अभाव है। डॉ0 हेम्ब्रॉम के मुताबिक औरतें अपनी बारी और कुँओं के आसपास जो औषधीय पौधे लगाती है उससे पारिस्थितिकी संतुलन होता है। भारत सरकार ने परंपरागत औषधीय पादपों और प्रणालियों पर ट्रेडीषनल नॉलेज डिजीटल लाइब्रेरी सृजित करने के लिए प्रस्ताव दिया है। यह लाईब्रेरी परंपरागत ज्ञान संसाधन वर्गीकरण के लिए सहायक होगी।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है, कि निष्चित रूप से इन औषधियों की सही पहचान यहाँ के लोगों को ही है। सरकार यदि इनकी इन जानकारियों को बेहतर इस्तेमाल करते हुए इसकी मार्केटिंग करें तो आनेवाले दिनों में इसके बेहतर परिणाम सामने आ सकेंगें

स्वास्थ्य सेवाओं और आधुनिक दवाओं के प्रचार के बावजूद तथ्य यह है, कि भारत की 60 फीसदी से भी अधिक आबादी जड़ी–बूटियों पर ही आश्रित है। इसलिए चिकित्सा की इस पुरानी संस्कृति को और अधिक कैसे करागार बनाया जाय। इस और ध्यान देना होगा।

संदर्भ सूची

1. कालीचरण गुप्ता, ग्रामीण कुटीर उद्योग, एवं स्मॉल स्केल, इण्डस्ट्रीज, दिल्ली, प्रकाषन वर्ष 1999 पृ0–62.
2. वही, पृ0–65
3. कीर्ति विक्रम, लघुवन पदार्थ एवं औषधीय जड़ी–बुटियाँ, झारखण्ड सरकार विभाग, झारखण्ड जनजातीय शाखा संस्थान राँची वर्ष 2002 पृ0–33–34.
4. चर्तुभुज मामोरिया, एवं एस0सी0 जैन, सेविवर्ग प्रबंध एवं औद्योगिक संबंध, साहित्य भवन आगरा 12वाँ संस्करण 1994, पृ0–318.
5. विजय शंकर उपाध्याय, गया पाण्डेय, जनजातीय विकास, पूर्वोदृत पृ0–89.
6. कीर्ति विक्रम, लघुवन पदार्थ एवं औषधीय जड़ी–बूटियाँ, पूर्वोदृत पृ0–34–35.,
7. बासवी, तावेन जोम जमीन का हिस्सा, आधार प्रकाषन, पंचकुलाा हरियाणा, 2003, पृ0–188.
8. विद्याभूषण, इतिहास के मोड़ पर झारखण्ड, पूर्वोदृत पृ0–166.
9. बासवी, तावेन जोम जमीन का हिस्सा, पूर्वोदृत पृ0–189–190.
10. (वन एवं पर्यावरण विभाग, झारखण्ड, झारखण्ड के औषधीय पौधे, अगस्त 2010
11. विपिन कुमार, सामाजिक वानिकी विस्तार एवं पर्यावरण संरक्षण, कुरूक्षेत्र, जून 1995.
12. रामजीवन दास, लघुवन पदार्थ का कार्य एवं उससे लाभ, रिर्पोट 1980, पृ0–32.
13. विद्याभूषण, इतिहास के मोड़ पर झारखण्ड, पूर्वोदृत पृ0–168.
14. रूपक, जागो मांदर बाजा, वर्ष 2012, पृ0–166.
15. तारा शर्मा, खरिया जनजीवन, के0के0 पब्लिकेषन्स, इलाहाबाद प्रथम संस्करण 2007, पृ0–82
16. एम0पी0 सिंह एण्ड, जे0एनव श्रीवास्तव, मेडिसीनल प्लॉट ऑफ छोटानागपुर, बिरसा कृषि वि0वि0 काँके, 1989.
17. मिथिलेष सुधीर पालसंपादक, हाषिए के स्वर प्ट, लेखक रमेष शंकर प्रसाद, झारखण्ड हर्वल सटैट अगाज तो अच्छे हैं, संवाद मंथन पृ0–04.
18. वही, पृ0–05.
19. हरिवंष फैसल संपादक, झारखण्ड सुषासन अब भी संभावना है, लेखक पार्थ0 जे0 शाह आधुनिक अर्थव्यवस्था से जुड़े झारखण्ड, प्रकाषन, संस्थान नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2009, पृ0–66.
20. हरिवंष फैसल संपादक, लेखक रामदयाल मुण्डा, झारखण्ड विकास की चुनौतियां एक प्रारूप, प्रकाषन संस्थान नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2009 पृ0–93.
21. एम0 के0 सिंह, झारखण्ड विकास एवं राजनीति संभावनाएँ एवं चुनौतिया, प्रकाषक गगनदीप पब्लिकेषन्स प्रथम संस्करण 2002, पृ0–93